

बाजो । परस्पर जयरुघनाथजी की कर सवार आगे च
 कृपक मन में विचारने लगा कि राठोड़ तो म्हाका स
 छै, म्हाको फूमो नाम और यां कह्यो नाहरभिंह नाम
 तब कृपकने पीछे से पुकारा, सवार ने सोचा कि मारग
 भूल होवेला तब पीछा आया । अब वह गरूर का भ
 हुवा बोला सुणो सगा म्हाको नाम नो बाध, तेहरे चीत
 ओडो भर बिच्छू, फूंफूं करता दो सांप, इतना सुनकर
 राठोड़ क्रोधित हो म्यान से तलवार निकाली । कृपक त
 लवार को देख भगा और भगता हुवा बोला ना ठांका
 मारजो मत थांने गोविंदजी की और घनश्याम धर्णी व
 आण 'छै मेरो यो नाम तो भूवा रांड मराचा के तो
 कढायो छो म्हाको सागे नाम तो फिसकणियो छै" । य
 हाल उक्त नाम का समझो । फिर एक मालिक के द
 पहरेदार नौकर थे एक राजपूत और दूसरा मुसलमान
 राजपूत ने पूछा मियां तेरो के नाम है, मियां ने कह
 कुतबअली खां । रातको पहरा बदलने जब राजपूत
 पुकारा अरे कुत्ता बिल्ली खां, कुत्ता बिल्ली खां तो
 गुस्से में हो बोला कि अरे रंगड़ ऐसा क्या बकता
 मेरा नाम तो कुतबअली खां है । राजपूत बोला हूं म
 यूं ही कहूं हूं, "तेरे मेरे बोली को फरक, थे कहो फरि
 म्हे कइवां जरक" । बात तो वाकी वा है, आपके ।

लेख पढ़ गुरु दादा साहब के भक्त आपके नाम के पीछे
अभीयोजना विशेष लगायेंगे ।

दोहा-ज्ञानसुन्दरजी नाम में, नहीं ज्ञान का लेख ।

गुरुजन के निंदक प्रबल, हृदय भरा है द्वेष ॥

लोग आपको ज्ञानसुन्दरजी • साधुजी कहते होंगे ।

परन्तु लोकोक्ति तो विलक्षण ही है । जैसे:—

दोहा-जगतण को भगतण कहे, कहे चोर को शाह
चलती को गाड़ी कहे, यही जगत की राह ॥

आपकी कृती जैसे कोई मनुष्य भक्त बन अपने पूज्य
के नाक पर बैठी मक्खी को जूती में उड़ावे, उसे बुद्धि-
मान क्या समझें । इस प्रकार मेजरनामा लिख तपासवेगी
संवेगणियों की, और अपने प्रथम करे गुरु २२ समुदाय
के पूज्य श्रीलालजी की निंदारूप पुष्पमाला परम पूज्य
रत्नप्रभसूरिः के गले में पहनाइ, दूसरी खरतरगच्छाचार्य
दादा गुरुदेवों की निंदारूप पुष्पमाला उनके गले में डाली
है । भक्त हो तो ऐसे हो । किसी का आटा कुत्ता खाता
हो देखने वाले का नुकसान तो नहीं लेकिन विवेकी अ-
नुचित समझ अवश्य उस कृत्ते को दूतकारेगा । दुष्ट बुद्धि
वाला पराये का नुकसान में खुश होता है । इस मुजब
हम तो ऐसी पुष्पमालों की बुरी समझी है ।

प्रागे ८४ गच्छ में कई २ आचार्य प्रभावक हेम-

चन्द्रमूरिः आदि हो चुके हैं । जिन आचार्य का रचा शब्दानुशासन जैनधर्म का गौरव दिखा रहा है कलिकाल सर्वज्ञ उनको कहते हैं । इनमें पहले सलग्न सरतरगच्छा-चार्य जिनवल्लभमूरिः ५२ गौत्र प्रतिबोधक सवालाख घर जिनधर्म त्याग वां विधर्मी होगये थे ऐसे राजन्यवंशी आदि का ओमवाल बनाने वाले दस हजार राजपूतों को मोटेगा नगर में जिनधर्मी बनाने वाले मोठ बनिया कहावे हैं, दादा श्रीजिनदत्तमूरिः अनेक राजन्यवंशी प्रतिबोधक मणिधारी श्रीजिनचन्द्रमूरिः ५० हजार राजन्यवंशियों के प्रतिबोधक दादा श्रीजिनकृशलमूरिः ऐसे ओमवाल वंश के वृद्धिकारक अनेक सरतराचार्य हुए, महाप्रभाविक होने से इनको ८४ गच्छ शृंगारहार कहने में अन्युक्ति नहीं । क्योंकि इनके प्रतिबोधे आचकों से सब बेपधारी निर्वाह करते हैं, मीजे को मीजाने में तारीफ नहीं । तारीफ विचर्मी दृष्टों को पुनः जिनधर्मी बनाने वालों की है, और और गच्छ के जेनाचार्य ने भी कतिपय को जिनधर्मी बनाये हैं, जैसे किमी नामी प्रभाविक जेनाचार्य ने ओमिया नगरी मारवाड़ में वि० संवत् ६०० के पीछे ओमवाल बनाये हैं, वह रत्नप्रममूरिः नहीं किन्तु अन्य गच्छी आचार्य थे । प्रमाण मिलने से नाम प्रगट किया जायगा इस समय कोई रत्नप्रमाचार्य नहीं हुए हैं, वह आगे प्र-

माण लिखा है । वेद कहलाने वाले १ गोत्र के कईएक कुंअलागच्छ के पाबंद हुए जिसका कारण आगे है । संवत् ६०० के पहले आंमवाल जाति का पतन मिलता है । शिला लेख मूर्ति के लेखों से वि० सं० २०० में वर्द्धमानसूरिः वस्तिशोधक के शिष्य जिनेश्वर को खरतर विरुद्ध मिला । वह संवत् ११०२ में निक गये । संवत् ११०० से खरतरगच्छ प्रतिबोधक ने नगर २ में अपने धर्माचार्य गुरु की स्थापना पूजन स्मरण कर दोनों भव का लाभ उठा रहे हैं ।

गयवरचन्दजी भर्तृहरि के इस श्लोक पर कटिबद्ध हुए मालुम दते हैं ।

यत यस्यास्तिविज्ञंस नरः कुलीनः

सएव वक्ता सचदर्शनीयः ।

संपंडितः सश्रुतवान् गुणज्ञः

सर्वेगुणाकंचिनमा श्रयन्ते ॥१॥

अर्थ—जिसके समीप धन है वह पुरुष ही कुलवन्त है उसका कदना भी लोग आदरते हैं वह ही दर्शन के योग्य होता है वह ही सुनने योग्य है, वही गुण का जानने वाला है, इसलिए सर्वगुण कंचन के शायम में रहे हुए हैं ।

इन सब ओसवालों को मैं मेरे गन्धकुंअलों के लिए
छाछूं तो वह मुझे धन देंगे । आशा करने वाला जगत
का दास बन जाता है । दोहा—

जब लग योगी योग में, तब लग रहत निराश ।
जब आशा तृष्णा जगी, जग गुरु जोगी दास ॥

आशा को ३ करण ३ योग से त्यागने वाले निर्ग्रन्थ
ही मुक्ति पाते हैं, नहीं तो जब धोबी महात्मा एक सदृश
ही है । जैसे भूतनाथ वैसे ही प्रेतनाथ ।

दोहा—जाकी शोभा जगत में, वा को जीबोधन ।
जीते ही वह मर गये, सुने कुशोभा कन ।

यत लोभ मूलानि पापानि रस मूलानि व्याधयः
स्नेह मूलानि दुःखानि त्रयस्त्यक्त्वा सुखी भवेत्

अर्थ—पाप का मूल लोभ, रोग का मूल रसादि भ-
वण, दुःख का मूल स्नेह, इन तीनों को त्यागने वाला
सुखी होता है ।

दोहा—

तुलसी या जग आयकर, कोन भयो समरथ ।
एककंचन अरु कुचन पर, किण न पसारयो हृत्थ ॥
जन्म मरण दुःख से डरे, मन आया वैराग ।
वन समरथ दोनूं तजा, लिया मुक्ति का माग ॥

२२ तीर्थंकर के साधु परिग्रह में स्त्री को मानते हैं ।

अपम महावीर के साधु परिग्रह को स्त्री को अलग २
 त्यागना कहते हैं, पुस्तक पात्र ज्ञानोपगमणादि वा शरीर
 संरक्षण मूर्च्छा जिसके है वह परिग्रह है इम परिग्रह से
 अब शेष ४ महाव्रत समूल नष्ट ज्ञानियां ने नहीं करमाया
 लेकिन चौथा अव्रत मेवत ही. अब शप चारों महाव्रत के
 जड़ में अग्नि लग जाती है ऐमा वीतगम ने फरमाया है।
 दोहा-चक्की फिरती देख के, दिया कबीरा रोय ।

दो पाटों बिच आय कं, भाचित चचा न कोय ॥

चक्की फिरती देख क, हुचा कबीर उदास ।

कहक साहिक बच गये, कील साकही पास ॥

इसलिये अन्य दर्शन के पुराणों में ८८ हजार अष्टपि
 बनोवासी सूक्त फल, पुष्प, पत्र खाते ऐंसे तपेश्वरी भी
 आखिर में स्त्रियों के दाम हुए ।

दोहा-कंकर पत्थर खात है ताको व्यापत काम ।

पट्टरस भोजन जो करे, ताकी जानत राम ॥

मनुष्य, मिह, मांस, हस्ती आदि भयंकर को वश
 में करता है, समुद्र में कूद मोती अंशर लाता है, आकाश
 में उड़ना आदि दुष्कर कार्य करता है शत्रुओं के संग्राम
 में शंख प्रहार सदता है लेकिन स्त्री के सन्मुख लाचार
 होता है ।

जगत जोड़े दाय, कामनी रह अनमीकिसी ।

मर्यां त्रिलोकीनाथ, राधा आगल राजिया ॥

वो स्त्री मन से दुराचार सेवने चाहती है, लेकिन लोकलज्जा से वा अवकाश मौका न मिलने से काया से कुशील नहीं सेव सकती है । ऐसे मन विदून पाले शील से स्वर्ग की बिना पति की अप्सरा देवी (वेश्या) उत्पन्न होती है । असंख्य वर्षों तक मनमाने जिस देव से रति विलास करती है, और जो ३ कारण ३ योग से ब्रह्मचर्य पालते हैं उनकी अवश्य मुक्ति वीतराग ने फरमाई है । बाजे परिग्रह और स्त्री को व्यवहार में त्याग देते हैं लेकिन उन्हों से कपाय मात्सर्यता नहीं छूटती है ।

कंचन तजयो सहज है, सहज त्रिया कां नेह ।
पर निंदा पर ईर्ष्या, तुलसी दुर्लभ येह ॥

त्यागी नाम धरा करके भी परस्पर गच्छ कदाग्रह करने वाले जिनधर्म की वृद्धि कदापि नहीं कर सकते हैं, एक आक्षेप करता है तब दूसरे भी प्रत्युत्तर देते हैं । मिथ्यात्व का काटना तब ही जिनधर्म की वृद्धि होगी इस परस्पर के कुमंष से दिन प्रतिदिन जिनधर्म घटतों चला जाता है । (ज्ञानसुन्दरजी) नामा भास ने एक जाट के जैसा हाल किया मालूम पड़ता है ।

एक राजा ने शंभु वेष किया, सब वेषधारी भोजन करने आने वालों को देख एक जाट ने विचार किया कि लट्ठ तो मेरे को भी खाना है लेकिन बिना वेष का स्वांग

निकाल दिया । जैन महाजनो ! ऐमा ही हाल ज्ञानसुन्दरजी ने किया है । मन चंगे माल, लंबी दंडवत, ऊम देवस्त्र ठाठ जमाने बिना गुरु वेष धारण किया इनके लेखों से मनोक्त वेष धरा मालूम दिया, गुजराती मिसला है—
‘सी जाय रूए के धूए, आदत जाय मुए’ मेरा प्रत्युत्तर लेख कटुक तो है लेकिन पुराने द्वेष रूप ज्वर को काटने कटुक अमृत जैसा गुण करता है लोभरूप तरुण ज्वर में प्रत्युत हानिस्पात् करती है हानि का उपदेश उभयलोक सुखप्रद होता है लेकिन अज्ञान मिथ्यात्व के उदय से भारी कर्म जीव को नहीं रुचता है । यथा—

कहारे अज्ञानी जीव को, गुरु ज्ञ न बतावे ।

कयहू न विपधर विष तज, कहा दूध पिलावे ॥ क०

ऊपर इत्ता न नीपजे, कहा घोवन जावे ।

राश भल्ला रन त्हाड़ ही, बहा गंग नहावे ॥ क० २

काली ऊन कुमाणमा, रंग दूजो न आवे ।

श्रीजिनराज कोऊ कहा, पाको सहज मिटावे ॥ क० ३

फलोद्दी के संघ ने संघ से निकाल दिया तो क्या दुष्सा गंगत कहा है, आँख के धंधे गाँठ के पूरे कोई न कोई तो आवेगा ही कर्ममहित को भाग्यसहित सो कोस के आँटे में भी आ मिलते हैं ।

स्वाति नक्षत्र में गिरी हुई चूंद साँप में मोती, केलें में कपूर, चाप्रक की प्यास बुझ, साँप के दूख में गिर

से विष होता है । ऐसी शिक्षा का स्वरूप ममभक्ता । मुझे
अब आप दिल चाह मो लिख देना गुह निंदा आपने
लिखी तब उत्तर लिखा है । लिखने में भूल रही हो तो
मिच्छामिदुक्कडं करता हूं । ओ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

जब लग पूरव पुण्य का, पटुंछे नहीं करार ।

तब लग तुम को माफ है, ओगुण करो हजार ॥

पुण्य क्षीण जब होयगा, उदय होयगा पाप ।

जैसे वन में लाकड़ी, सिलगत आपो आप ॥

यत वृष्टिकर्षकमिच्छति शान्ति मिच्छति साधवः ।

मक्षिकाव्रणमिच्छति द्रोहमिच्छति दुर्जनः ॥१॥

आप ज्ञानसुन्दरजी चस्मे दो हो तो लगाकर पढ़िये ।

यत उदरनिमित्तं बहुकृतवेषा, शिरस्तु मुंडित

लुचित केशा, वृद्धोयातः गृहीतंदंडं, तदपि न

मुंचति आश्यापिडं ॥

त्यागव्रत पूरा नहीं, साधू हुआ तो क्या हुआ ।

॥ शुभम् ॥

सर्व श्रीसंघ का कृपाभिलाषी—

बृहत्स्वरतर भट्टारकगच्छीय महोपाध्याय,

श्रीरामलाल गणिः

सिद्धपुत्र जैनधर्मोपदेशक.

ॐ श्री पंच परमेष्ठिनो नमः ॥

श्री ज्ञानदर्शनचारित्रिदाता धर्मशील (साधु) जी सद्गुरुभ्योनमः ।

॥ श्री वाग्देवतायै नमः ॥

असत्याक्षेप निराकरण ।

समस्त जैनधर्मी चतुर्विध धर्मसंग्रह को मालूम हो कि मैंने “महाजन वश मुक्तावली” नाम की पुस्तक लिखी थी उसमें जो २ लेख मिले वे प्रमाणिक आचार्य उपाध्यायादि के मुख से ध्वनित किये थे । उन सबों का संग्रह कर छपवाया । जिसकी प्रथमावृत्ति एक सहस्र प्रति विक्रम संवत् १९६८ में प्रसिद्ध हुई थी वह विक्रम संवत् १९७८ में द्वितीयावृत्ति दो सहस्र सं० १९७८ में छपवाई । अब इनके वर्ष व्यतीत होने पीछे कुशलागच्छी, गजवरचन्द्रजी ने सं० १९८३ में उसमें सत्य लिखे हुये खरस्तगच्छाधिपति जिनवन्धसूरिः जिनदत्तसूरिः आदि का महात्म्य पभाव का पढ़ कर, द्वेषहृति और दिशेय-तया लोभ पिशान से विषम हो उसको समालोचना (पिच्छना) “ जैन जाति निर्णय ” नाम की पुस्तक के दो शब्द छपाकर प्रसिद्ध किये हैं । उनका प्रत्युत्तर मैंने लिखा है । काम नहीं । किन्तु उन्हीं के असत्य आरोपों को, जैसे बाद आये वैसे ही यथार्थता निराकरण किये हैं ।

मैं यद्यपि दमन्य हूँ और अब मेरी ७० वर्ष की आयु है, वहाँ बूढ़ि रहती हूँ तो विपुल जन सुभागेने, और इसको सम्प्रोषण करने के लिए विचार करे कि गजवरचन्द्रजी का लिखना कहां तक सत्य है ? द्वेष होने का कारण तो अनुमान न प्रमाण से दा मालूम होता है । विक्रम संवत् १०२० में पाटण में शिवदासी जिनमदिर में

उसमें चढ़े हुये द्रव्य को अपने भोग, उपभोग में लेना, इस लालच से उस द्रव्य के जरिये से नये २ जिनचैत्य कराना इत्यादि। इस अकृत्य को दूर करने वर्द्धमानसूरिः और उनके शिष्य जिनेश्वरसूरि यह दोनों गुजरात देश के अणहिल पाटण में जा, राज सभा में उन चैत्यवासियों का जहाँ ज्यादा चल और समुदाय था। वहाँ उन्होंने राजा की आज्ञानुसार शास्त्रार्थ अनेक विद्वानों की मध्यस्थता में किया। वहाँ साधु का आचार आचारांग और दश वैकालिकादि सूत्रानुसार, और साधु का वेप धार कर जो जिनमंदिर आप द्रव्य द्वारा बनाये या थायक के अभाव से, धावरू के भाय से बनाये हुए जिनचैत्य का साधु वेपधारी कभी आप अपने द्रव्य से जीर्णोद्धार भी करावे तो, अमंथ्य भव संसार में जन्म मरण यह द्रव्य साधु वेपधारी करें, उन द्रव्य वेपधारी को पूर्वोक्त कार्य करने की आज्ञा देने वाला शुद्ध चारित्रधर की भी यही गति हो, ऐसा महानिर्णीय देव ग्रन्थ कमल प्रभाचार्य का लेख दिपाया। जिनचैत्य व जिर्णोद्धार कराना गृहस्थ थायक का कृत्य है। वह भी न्यायोपाहित द्रव्य और मुक्ति के अर्थ भाय से करावे और अष्टद्रव्यादिक से पूजा। इसी सूत्र लेख में व जानामुत्र के छुटे अङ्क से रायप्रशंणी उपांग में थायक का करना। समकित पुष्टी के लिये, साधु का जिनप्रतिमा के मन्मुख देखने भाव स्पष्ट हो करना सिद्ध किया।

तब प्रजा ने व पंडितों ने कहा तमे करा दो। राजा दुर्लभ और दूसरे विद्वानों ने सस्तर विरह दिया और शिष्याभिर्यो का कहा तमे कुंशना दो। उस समय भट्ट खोंगों ने ऐसा कहा:—

हा-हारना तं कुंशना भया, जीना मरतर जाणिया।
निगे काल श्री संय में, गच्छ दोय यखाणिया ॥

चैत्यवासियों पर यह जिनेश्वराचार्य का प्रथम उपकार था। कई एक आत्मारथियों ने इस कृत्य को त्याग दिया। कईयों ने नहीं त्यागा। द्वेष का कारण तो यह हो सका है।

गयवरचंदजी के द्वेष का दूसरा कारण धन का लालच है। जैसे कुश्तडी दूसरे के घेर सब खड़े, मेरे मीठे नहीं कहे तो उसके नेरों की धिक्की कैसे हो ? "महाजन वंश मुक्तावली" की धिक्की देख धन जमा करने का विचार किन्ना कि मैं सब आंसवालों को कुञ्जलागच्छ प्रतिशोधक लिख दूँ, तब यह सब मेरी पुस्तक खरीदेंगे। तब मेरा द्रव्य का खजाना भरेगा इसलिये लिखा है मेरी जन जाति महोदय नाम की रची पुस्तक पढ़ो।

तीसरा अपने घमण्ड का कारण भी मालूम होता है। मन में समझ रहे हैं कि जैनवर्ग में आज मेरा सुकायला करने वाला कोई नहीं है। मेजरनामा द्रपयाया और स्वर्गियों की निंदा लिखने में कमी नहीं रखी। किसी ने भी दाँव जड़े नहीं कहे। टीटोड़ी पत्नी अपने दोनों पाँव ऊंचे कर सोती है, अशिप्राय उसका ऐसा है कि आसमान गिरे तो मेरे पाँवों के पल गिरने नहीं पायेगा। इसको यांभवे वाली मैं ही हूँ। अर्थात् इस समय साधु मैं ही हूँ। जैनवर्ग सात मेरे आचार पर है, चलती घंल गाड़ी के मध्य में हत्ता घुस कर चलता है और मन में समझता है कि यह गाड़ी मेरे ही पल से चल रही है। यह सब घमण्डियों के लच्छान बुद्धिमान जानते हैं। धन और स्त्री के लिये गारु में लिखा देता है,—

पत सर्वेषामेपरतानां स्त्रीरतनंतुञ्जतम् ।

तदर्थं धनमिच्छन्ति तत्प्रागेनानेन किं ॥

अर्थात् सखारी मनुष्य स्त्री रत्नों में रत्न रत को उत्तम समझते हैं, उसके लिये धन की पाँदा से अनेक उपन करते हैं। उसका

त्याग जिसने किया उसको धन इकट्ठा करने की ज्यादा जरूरत नहीं।

प्रश्न—यदि कहोगे यति लोग धन क्यों रखते हैं ?

उत्तर—यति लोग वर्तमान काल वाले पंच महाव्रत नहीं उच्चरते हैं, उन्हीं को धर्मोपदेशक जैन पंडितपद की दांता देते वक्त श्रुत-सामायक (सम्यक्च सामायक) गुरु उच्चरते हैं। सामायक तीन प्रकार को सिद्धान्तों में लिखा है। उपाध्याय क्षमा कल्याणजी ने ज्ञानपंचमी के स्तवन में लिखा है।

जहां साधु श्रावक मारग लहिये, सवेग पक्षी बलिसर दहिये।
ये त्रिणविन भव मारग कहिये, श्रुत अतहिभला सव सकल आ-
धारनमू त्रिभुवनतिलो ॥१॥

अर्थात् जिनेश्वरदेव का कहा हुआ ऐसा श्रुतज्ञान है जिसमें साधु का मार्ग १ श्रावक का मार्ग २ और तीसरा सवेगपक्षी का मार्ग कहा है इन तीन बिना अन्य सब भव भ्रमण का मार्ग है। अब बुद्धिमान समझ सकते हैं। सवेगपक्षी और साधु यह दो भिन्न २ कौन हैं।

खरतरगच्छ में सवेगी साधु इनके गुरु वाचक अमृत धर्म और इनके शिष्य उपाध्याय क्षमा कल्याण गणि हुये, जिन्होंने संस्कृतवद्ध जैनग्रंथ सौ रचे स्तवनादि अनेक सवत १८०० के मध्यकाल में खरतर भट्टारक श्रीजिनचन्द्रसूरि के समय में देवचन्द्रजी न्याय चक्र-
१ सवत १८१० में देवलोक हुये और उक्त दोनों मुनि, महन्त तीसरे
अध्यात्मिक कबीश्वर सविश्र साधु ज्ञानसार (नरायण) दावा समय हुये निकलना इसलिये सम्भव होता है। उस समय मन्दाचारी होना शुरू हुए थे, लेकिन क्षमाकल्याणजी ने संस्कृत ग्रंथों में जिन दर्पदूरि गणधर के राज्य में यह

रखा ऐसा प्रायः लिखा है। उस पीछे यति श्रुतसामायक दीक्षा शिष्य को देने लगे। श्रुतसामायक सम्यक्त्व को कहते हैं, यह है तो सब धर्म की जड़ है। तथा आत्मारामजी जैन तत्वादश ग्रन्थ में लिखा है कि साधु के रूप वाला जब तक मन में मोह क्षय करने की चाँझा रखता है उसको साधु समझना ऐसे यति लोग धर्म ठग नहीं और जो ऊपर से साधु का बाना हो और धाधकों से पुस्तकादि के धोके से धन इकट्ठा करते हैं और लडकों के सगन करने योग्य रमत खेल करने वाले जमना से पार उतर पूव के सब तीर्थ की यात्रा करी ऐसा समझने वाले, ऐसे धूर्त को शतशः धिक्कार है। महाव्रत उच्चार कर मूल गुण भंग करे उसको ओसना पासत्या आदि तीर्थ करने फरमाया है यह विशेषण उन महाव्रतभगी के लिये है वर्त्तमान यतो गुरु के लिये नहीं कहा है।

वाजे गृहस्थ भी ऊपर की क्रिया मात्र देख ऐसे धूर्तों के दृष्टि-रागी होते हैं। चियेकी तो जैसे का जैसा समझ लेते हैं। एक दृष्टि रागी गृहस्थ की स्त्री से साधु उस गृहस्थ का माननीय अव्रत सेव रहा था इतने में वह दृष्टिरागी गृहस्थ घर पर आया और साधु के भोली पात्र ओघा पड़ा देखा और कोठे का दरवाजा बन्द देखा तब छुप के खड़ा रहा पीछे वह साधु नामधारी बाहिर आकर गुचि करने गरम जल उस स्त्री से मांगा। स्त्री ने कहा टाढो आपू, उसने कहा ना उष्ण आवा, स्त्री ने गरम जल दिया। यह हाल देख वह दृष्टिरागी मन में अत्यन्त क्रुश हो वह उठा धन्य छै साधुजी ने ते क्रिया मां नथी पूर्या चौधू अव्रत सेव्यूं आ मां साधुजी नो दोष नही आ तो कर्म धनो दोधा जानो साधुजी सुं करे अपनी स्त्री से कहने लगा। साधुजी ने त्यां दू भले जा, साधुजीनी लोको मां पैठ प्रतीति छे, आटे घरनी आयरु नही जाय गोरजो ने त्यां जाजे क्षामां किरिदा प्रतीति नथी। इस दृष्टान्त को ध्यान में लो। २

पहले विक्रम संवत् २०५ में स्वामी शङ्कर जन्मे और उन्होंने राजाओं से मदद पाई। जैनियों से शास्त्रार्थ तो नहीं किया लेकिन राजाओं से सुभट्टों को हुक्म दिलवाया जैसा कि शङ्करदिग्विजय में लिखा है।

“आसेतु तुपाराद्रि घौझानां वृद्धं घालकं निहंसिभृत्यं इत्यवश्यं नृपा”

अर्थात् सेतुबंध (रामेश्वर)। से लेकर हिमालय पहाड़ तक। घौझ धर्मियों के वृद्ध और घालक को सुभट्ट जो राज भृत्य है, घह करल करे। ऐसी राजाओं ने अवश्य आशा दी। ऐसा घोर जुल्म जारी हुआ। अन्य धर्मी घौझ और जैन धर्म को एक ही समझते थे। इनके लेखानुसार कितने ही समय तक पश्चिमी विद्वान भी ऐसा ही समझते रहे लेकिन अब जैन और घौझों के ग्रंथ पढ़ने से निश्चय होगया कि यह दोनों सदा से जुदे जुदे हैं। एक नहीं घौझ आत्मा को क्षण भङ्ग मानता है। जैन आत्मा को अविनाशी मानता है। घौझ मरे जीव के मांस खाने में दोष नहीं कहते। जैन मांस के खाने में नरक गति बतलाते हैं। घौझ के मत में रात को खाने में दोष नहीं मानते हैं। जैनधर्मी महापाप मानते हैं। बौद्ध नास्तिक है। जैन आस्तिक है। जैन जीव के किये हुये पाप, पुण्य के स्वर्कर्मनुसार नरक स्वर्गादि गति में फल भोगना मानते हैं। कर्म का तदन घौझ नाश होने से जीव की मुक्ति, सच्चिदानन्द होना मानते हैं। फिर वह मुक्त जीव का संसार में जन्म लेना नहीं मानते हैं। इसलिये बौद्धों का मानना इनसे उलटा है वह प्रमाणपत्र लिखा है।

‘जुल्म की जड़ कोता’, इस कहावत मुजब - “सेर को सदाखेर” सा पहुँचा। ईस्वी सन् १००० में मोहम्मद गजनवी की चढ़ाई हिन्द में पहली हुई। ईस्वी सन् एक हजार चौदास तक गुजरात पर तेरहवीं चढ़ाई आकराई हुई। इसमें करोड़ों हिन्द और “तनाख के

स्त्रियों ऐसे धर्म धूर्तों का सहवास ज्यादा कर्ता है और वह अपना जन्म और उन स्त्रियों का जन्म बिगाड़ते हैं। दृष्टिरागी इस पर ध्यान नहीं देते हैं। आखिर तो गन्ध फैल ही जाती है।

दोहा-वैद्यन को रिपु दोष है, वेदया को रिपु भांड।
ब्राह्मण को रिपु साध है, साधन की रिपु रांड ॥

अब देखो धर्म धूर्तपने का गयधरचन्द्रजी का लेख आठ इतिहास वेत्ताओं का प्रमाण "जैन जाति निर्णय" में दिया है, पहला प्रमाण राय बहादुर पं० गौरीशङ्करजी ओझा का है। उक्त महोदय सं० १९२३ के आश्विन सुदी ६ को वोकातेर बड़े उपाश्रय में भट्टारक श्री जिन चारित्रसूरिध्वरजी के दर्शनार्थ आये थे। वहां पर मुझे भी बुलाया, जब श्रीजी से बोधरा कल्याणत कर्मचन्द की वंशावली देखने को मांगी, जो आप पहले देख चुके थे। उसका पडताल को, जब श्रीजी ने दफ्तर दिखाया तब यथार्थ विदित हुआ। फिर मुझ से कहा कि आप रचित "महात्मन मुक्तावली" को मैंने आद्योपान्त पढ़ी और प्रशंसा के योग्य है, लेकिन उपलब्ध पेंवार का होना, एक हजार वर्ष शिला लेखों से सप्रमाण सिद्ध है। आपने चौबीस सौ कुछ ऊपर वर्ष लिखा है। तब मैंने कहा, यह असत्यता मेरी नहीं, किन्तु कुंअलगच्छ के गृहस्थ महात्मा लखजी ने जो मुझे पत्र दिये उससे लिखा गया है।

संवत् १५०० में कुंअलगच्छ के आचार्य गृहस्थ महात्मा (मथेश) व खजवाणा मारवाड़ के गांव में हो गये, तब कितने ही गुजरने पर संवत् सोलैसौ के अखीर में फिर कुंअलगच्छ में बनाया गया; इस लेख की असत्यता के दोषी कुवलौ की है। और भी असत्यता के बहुत प्रमाण हैं।

पहले विक्रम संवत् ८०५ में स्वामी शङ्कर जन्मे और उन्होंने राजाओं से मदद पाई। जैनियों से शास्त्रार्थ तो नहीं किया लेकिन राजाओं से सुभट्टों को हुकम दिलवाया जैसा कि शङ्करदिग्विजय में लिखा है।

“आसेतु तुपाराद्रि दौआनां वृद्धं बालकं निहंसिभृत्यं इत्यवश्यं नृपा”

अर्थात् सेतुबन्ध (रामेश्वर) से लेकर हिमालय पहाड़ तक। बौद्ध धर्मियों के वृद्ध और बालक को सुभट्ट जो राज भृत्य है, घट फटल करें। ऐसी राजाओं ने अवश्य आज्ञा दी। ऐसा घोर जुल्म जारी हुआ। अन्य धर्मी बौद्ध और जैन धर्म को एक ही समझते थे। इनके लेखानुसार कितने ही समय तक पश्चिमी विद्वान भी ऐसा ही समझते रहे लेकिन अब जैन और बौद्धों के ग्रंथ पढ़ने से निश्चय हो गया कि यह दोनों सदा से जुड़े जुड़े हैं। एक नहीं बौद्ध आत्मा को क्षण भङ्ग मानता है। जैन आत्मा को अविनाशी मानता है। बौद्ध मरे जीव के मांस खाने में दोष नहीं कहते। जैन मांस के खाने में नरक गति बतलाते हैं। बौद्ध के मत में रात को खाने में दोष नहीं मानते हैं। जैनधर्मी महापाप मानते हैं। बौद्ध नास्तिक है। जैन आस्तिक है। जैन जीव के किये हुये पाप, पुण्य के स्वकर्मानुसार नरक स्वर्गादि गति में फल भोगना मानते हैं। कर्म का तदन दोज नाश होने से जीव की मुक्ति, सच्चिदानन्द होना मानते हैं। फिर वह मुक्त जीव का संसार में जन्म लेना नहीं मानते हैं। इसलिये बौद्धों का मानना इनसे उलटा है यह प्रमाणयश लिखा है।

‘जुल्म की जड़ कोता’, इस काव्यत मुजय - “सेर को सघासेर” सा पढ़ें। इसी सन् १००० में मोहम्मद गजनवी की चढ़ाई हिन्द में पहली हुई। इसी सन् एक हजार चौबीस तक गुजरातरहणी चढ़ाई माफरी हुई। इसमें बरोड़ों हिन्दू और “त

गजनवी के जुलम में, आप सेना लेकर खड़े रहे होंगे। असत्य की भी सीमा डुवा करती है, आपने तो गप्प का कोप भर डाला।

सोरठा-गप्पी गप्प प्रकाश अणदीठी भाखे इसी।
उडती फिर आकाश रंज न लागे राजिया ॥

सत्य वार्ता तो यह है कि खरतरादिगच्छ के घा और गच्छ के महान् आचार्यों ने ओसवाल जाति बनाई है। ऊपर लिखे जुलम गुजरने के पीछे विक्रम के ६०० सौ वर्ष व्यतीत होने पीछे शिला लेख मूर्ति लेख में ओसवाल जाति का नाम लिखा पाया जाता है। इस समय उपकेश (कुँअला) गच्छ में कोई रत्नप्रभसूरि आचार्य नहीं हुआ है।

तुमने चोरडिये कुँअलों के लिखे यह भी असत्य है। वीकानेर संवत् १५४५ में घसा उस घक्त खरतरगच्छ का उपासरा, उस पीछे कुँवलेगच्छ के गृहस्थी महात्माओं की पोशाल भी बनी, तब भी जँघरी, बजते, चोरडिये लोकों में पञ्जाब वीकानेर के गांवों में, सब लोकों में है, रामपुरिये चोरडिये, पार्श्वचन्द्र में, १६०० सौ के पीछे आचार्य भी कुँअलों के यहां रहे। चोरडियों ने नहीं माना। कुँअलों के होते तो मानते। चोरवेडिये चोडिये गोत्र जुदा है।

देवो पूरणचन्द्रजी नाहर का छापा मूर्ति लेख, किसी एक क्षेत्र में मान लिया। लेकिन कुँअलों के नहीं हो सकते। जैन धर्म में १२ दिगम्बराचार्यों के रत्ने लाखों ग्रन्थ हैं, किसी ने भी १२ रत्नप्रभसूरि: निशान तक नहीं लिखा है।
'ने शाखा' हो नहीं तो शाखाएँ कहाँ ने
'चोडा' डाला है। लाखों राजपूतादि
'रवाल' बाद भी जिनदत्तसूरि का

गजनवी के जुलम में, आप सेना लेकर खड़े रहे होंगे। असत्य की भी सीमा हुवा करती है, आपने तो गण्य का कोप भर डाला।

सोरठा-गण्यी गण्य प्रकाश अणदीठी भाखइ सी।

उडती फिर आकाश रंज न लागे राजिया ॥

सत्य घातों तो यह है कि खरतरादिगच्छ के वा और गच्छ के महान् आचार्यों ने ओसवाल जाति बनाई है। ऊपर लिखे जुलम गुजरने के पीछे विक्रम के ६०० सौ वर्ष व्यतीत होने पीछे शिला लेख मूर्ति लेख में ओसवाल जाति का नाम लिखा पाया जाता है। इस समय उपकेश (कुञ्जला) गच्छ में कोई रत्नप्रभसूरि आचार्य नहीं हुवा है।

तुमने चोरडिये कुञ्जलों के लिखे यह भी असत्य है। बीकानेर संघत् १५४५ में घसा उस घक्त खरतरगच्छ का उपासरा, उस पीछे कुँवलोगच्छ के गृहस्थी महात्माओं की पोशाल भी घनी, तब भी जंघरी, बजते, चोरडिये लोकों में पञ्जाब बीकानेर के गांवों में, सब लोकों में हैं, रामपुरिये चोरडिये, पार्श्वचन्द्र में, १६०० सौ के पीछे आचार्य भी कुञ्जलों के यहाँ रहे। चोरडियों ने नहीं माना। कुञ्जलों के होते तो मानते। चोरघेडिये चोडिये गोत्र जुदा है।

देखो पूरणचन्द्रजी नाएर का लाया मूर्ति लेख, किसी एक क्षेत्र में मान लिया। लेकिन कुञ्जलों के नहीं हो सकते। जैन धर्म में श्वेताम्बर दिगम्बराचार्यों के रचे लायों ग्रन्थ हैं, किसी ने भी १८ गोत्र स्थापक रत्नप्रभसूरि: का नाम निशान तक नहीं लिखा है। "नास्ति मूल कुतो शाखा" जब जड़ ही नहीं तो शाखाएँ कहाँ से हो ? वे प्रमाण लम्बा चोड़ा लेख लिख डाला है। लायों राजपूतानादि उत्तम वर्ग को ओसवाल करने वाले बादो भी जिनदस्त

के पास वनवाने की आज्ञा दी वह विद्यमान है। बादशाह अकबर ने तपाहीर विजयसूरि विजयशेनसूरि को अपने पास बुलाया, धर्म सुना। अहिंसा के फर्मान आदि लिख दिये। ऐसे ही खरतर श्री जिनचंद्रसूरि जिनसिंहसूरि को बुला कर धर्म सुना खंभायत आदि तीर्थ स्थानों की जीव हिंसा असाढ़ सुदी नवमी से पूनम तक कोई जीव जंतु मेरे राज्य में न मारा जावे। तपस्वी जिनचंद्रसूरि इस फरमान में यह लेख ज्यादा है। परमेश्वर ने अनेक भांति के पदार्थ मनुष्य के लिये उपजाये हैं। तब वह किसी जानवर को दुःख न दे और अपने पेट को पशुओं का मरघट न बनावे। इस लेख से मालूम हो रहा है। श्री जिनचंद्रसूरि उक्त जिनसिंहसूरि के उपदेश से अकबर ने मांस खाना त्याग दिया सिद्ध है। ज्यादा कर्त्तव्य पूरणचन्दजी नाहर तथा जिनविजयजी का मूर्तियों पर के लेखों में दोनों आचार्य के गुणानुवाद देखो। दो हजार वर्ष की निर्वाण के पूर्ण होने से जिन धर्म का उदय इन्होंने किया यदि १२ गोत्रों के प्रति बोधकों के सन्तानों बादशाह अकबर कुँअलेगच्छ को सुनता तो अवश्य कुँअलेगच्छ के आचार्य को ही बुलवाता। हे नहीं तो बुलावे कैसे उपदेश कुँअलेगच्छ के आचार्यों ने जिन २ मूर्तियों की प्रतिष्ठा की है उसमें अपने को सर्वत्र बकुदाचार्य सन्तानीय लिखा है। यदि १२ गोत्र प्रतिबोधक कुछ नामवरी वाले आचार्य रत्नप्रभसूरि होते तो उनके संतानी आपको लिखते इत्यादि प्रमाणों द्वारा सिद्ध है रत्नप्रभसूरि ने १२ गोत्र की प्रतिबोध दे ओसवाल नहीं बनाये आप फिजूल गलत पदों बताते हैं।

एक व्यक्ति ने अपना नाम न देकर दूसरे के नाम में भोजन प्रालम्बी को भाट किया है। ऐसा पूजने पर २०५० पै० गोरामा. ने कहा भोजकों के पदों प्रमाणों से यह साफलीया प्रमाण है। देश के सत्तर्गत साफलीय सभूत होता है। जो इस समय १०

ओसवालों का इतिहास की मांगनी कर सकता है। लखजी महात्मा भी आगे हो अपना इतिहास लिखने को हमको दिया। वह मैंने सरल भाव से लिख दिया। हम तो सिर्फ खरतरगच्छ प्रतिबोधकों मात्र का लिखते थे। फिर जो मिला वह सब लिखा। तुमने लिखा रोटी पछेवड़ी के लिये। खरतरगच्छ में ओसवालों को लिखा है यों तो ओसवालों के घर कोई भी वेपथारी किसी भी गच्छ का चला जाये तो रोटी व चदर न हो तो देते हैं। मालूम नहीं आपको रोटी पछेवड़ी के मालिक अपने २ गच्छ के श्री पूज्यजी होते हैं वह चाहे किसी को दे या न दे। जतोर्यों का उजर नहीं। अपने इल्म द्वारा हासिल करे वह उस जती का होता है जो आदेशों श्री पूज्यजी का भेजा जाता है वह ध्यात्यानादि धांचकर सुनाता प्रतिकरण पोसा देशावगासी तपविधि, पद्यस्मरण, कराना, धर्म ग्रंथ पढ़ाना, पूजा प्रतिष्ठादि धर्म, कृत्य कराता है। तब अपने धर्मोपदेशक उपगारी गुरु मात्र समझ के आमर व्याह आदि अनेक कार्य में वस्त्रादि शानोपकरण व नगदी भेंट करते हैं। उस धन से जती तीर्थयात्रा श्री पूज्यजी की भेंट, रोगादि कारण पर गुरु आदिक की देयावष्ट, वैद्यकों देने औपधी खर्च वस्त्र गुरु का देहात खर्च जीव राशि खमाणा टीप श्रीरणी दादागुरु देव पूजा, शिष्य लेना, परिष्ठत रत्न मासिक दे पढ़ाना दीक्षा व्यय पुस्तक निर्याना, शान भंडार इत्यादि अनेक शुभ कार्य में यति सविभाग तप कर पूठा पिटांगनादि देना यह धायकों का दिया हुआ द्रव्य लगा देते हैं। यह प्रत्यक्ष प्रवृत्ति है धायक सब देखते हैं और जानते हैं तभी तो द्रव्य उचित प्रमाण देते हैं त्यागी का लोभ जमा कर रुपया दो रुपया तो नहीं लेते हैं लेकिन पुस्तक लिखाने रुपाने परिष्ठत से गुप्त साजा रण उपयो दिलाने धन रखने को धायकों को हजारों रुपयों के लक्षों में उतारते हैं। ऐसा भाग्य प्रपञ्च धोका देना जती लोगों से नहीं बनता। उपादे कुपे में कोई नहीं गिरता लेकिन ऐसा ही का दम दिलाने वाले पास खेद के क्षण की तरह देखने वाला

श्रोतृवालों का इतिहास की मांगनी कर सकता है। लखजी महात्मा
 भी आगे हो अपना इतिहास लिखने को हमको दिया। वह मैंने सरल
 भाव से लिख दिया। हम तो सिर्फ खरतराचार्य प्रतिशोधकों मात्र
 का लिखते थे। फिर जो मिला वह सब लिखा। तुमने लिखा रोटी
 पछेवड़ी के लिये। खरतरगच्छ में श्रोतृवालों को लिखा है यों तो
 श्रोतृवालों के घर कोई भी बेपयारी किसी भी गच्छ का चला जाये
 तो रोटी व चढ़र न हो तो देते हैं। मालूम नहीं आपको रोटी पछेवड़ी
 के मालिक अपने २ गच्छ के श्री पूज्यजी होते हैं वह चाहे किसी को
 दे या न दे। जतोरों का उजर नहीं। अपने इन्म द्वारा दामिल कने
 यह उस जती का होता है जो आदेशी श्री पूज्यजी का भेजा जाता
 है यह ध्यायनादि श्रांति कर सुनाता प्रतिक्रमण पोसा देशावगासी
 तपविधि, पद्यस्मरण, कर्माना, धर्म ग्रन्थ पढ़ाना, पूजा प्रतिष्ठादि धर्म,
 कृत्य कराना है। तर आने धर्मोपदेशक उपगारी गुरु मात्र समझ के
 आमर व्याह आदि अनेक कार्य में ब्रह्मादि पानोपगच्छ व नगदी भेंट
 करते हैं। उस धन से जती तीर्थयात्रा श्री पूज्यजी की भेंट रंगादि
 पारण पर गुरु आदिक की देशावच्छ, चैत्रकों देने श्रौद्धी खर्च पत्र
 गुरु का देहात खर्च जीव राशि खमाणा दोष मोरणी दादागुरु देव
 पूजा, शिष्य लेना, परिहृत रख माभिक दे पढ़ाना दीक्षा व्यव पुस्तक
 निगाना, दान भंडार इत्यादि अनेक शुभ कार्य में यति श्रद्धाभाग
 तप कर पृथा विद्यांगनादि देना यह आषकों का दिया हुता द्रव्य
 नगदी देते हैं। यह प्रत्यक्ष प्रवृत्ति है ध्याय कर देनाते हैं और
 हैं नभों तो द्रव्य वृत्ति प्रमाण देते हैं ग्यानों का सोह
 गपरा हो गपरा तो नहीं लेते हैं लेविन पुस्तक लिखाने
 पण्डित से गुप्त राजा रख उसको दिलाने धन रखने को
 को राजासे गपरा वे सद्धों में नकारते हैं ऐसा भाव प्रपञ्च धं
 जती लोगों से नहीं बनता। गपराके रूप में कोई नहीं लिखता
 रसा तो का दम दिलाने दाने ध्याय सेट से हर्ष हो करह

के लड़ू फीके क्यों ?” जैसे कि मानलो ओसिया नगर चार लाख घरों की आबादी का था, उसमें सब राजपूत ही रहते थे। वाह क्या कहना है यह वार्त्ता प्रत्यक्ष प्रमाण के भी बरखिलाफ है ? किसी भी शहर में एक जाति के इतने घर होते न देखा न सुना ? ब्राह्मण, रोडे, खत्री, बनिये, नाई, धोबी, सुतार, कुम्भार, लुहार, तेली, तम्योली मांस भक्षियों के लिये कसाई, डेढ, थोरी, भगी, रैगर, चमार, माली आदि जिस शहर में देखते हैं सब में हैं। आपने लिखा कि तीन लाख चौरासी हजार घरों को रत्नप्रभसूरिः ने ओसवाल बनाये सिर्फ १६ हजार घर अब शेष बचे। इस लेख से तो आपने ओसवाल जाति को महाकलङ्क लगाया है।

सच है जिनके चचाजी ऐसे तो उनके फर्जनजी वैसे क्यों न हों ? आपके गच्छ की पट्टावली लिखने वालों ने कमी नहीं रफखी तो आप उनसे भी आगे पांच धरें, इसमें ताज्जुब ही क्या है ? “भाभेजी ने रातीधो, म्हाने भजलो ई राम। या दृशी शीतलादेवी तादसः खर बाहन.” यह मिसला आपके लेख का है। लेकिन इस असत्य लेख को पढ़कर या तो कोई कहेगा ओसवाल जाति तो “साँभर पड़ा सब लूण” सारी यस्ती के घासिन्दे स्रेच्छ तफ ओसवाल बने हैं। सत्य असत्य की परीक्षा करने वाले तो कहेंगे कि ओसवाल जाति अश्वपति उच्च जाति है उत्तम वर्ण से बनी होगी, नहीं तो साड़ी धारह न्यात के बनियों में कछो पक्षों में शामिल कैसे भोजन करते राजाओं के मंत्री और सब कार्य के मुखिया इनको राजा लोग कैसे बनाते ? आपने तो अपने गच्छ का महात्म्य सिद्ध करने को, लोभ के मारे अपने बनाने को ऐसा लेख लिखकर ओसवालों को लज्जित किया है। युद्धिमान ओसवाल आपकी कसोटो इसही लेख से लगा लेंगे। ओसवालों को प्रतिबोध देने वाले ओसिया में और ि गच्छ के आचार्य हैं। कुँखलागच्छ पाते नहीं। यह भी हजार के लगभग क्योंकि मूर्तिलेख शिलालेख के प्रमाणों से।

साधु अन्धे को अन्धा न कहे और चोर को चोर्, व्यभिचारी को व्यभिचारी न कहें। कहे तो मृषावादी साधु हो, ऐसा भगवान ने फरमाया है। लेकिन यह कथन जैन सूत्रों में साधुओं के लिये ही है गयवरचन्द्रजी के लिये नहीं भूँठ और निंदा का त्याग होता तो दो किनाश नहीं लिखते। जैसे कुलटा अपनी पैठ जमाने को अन्य सब स्त्रियों को कुलटा बतलाती है। तुम ने कोरंटवालनक्षुरि के प्रतिबोधक बोधरों को लिखा है और नहीं २ ऐसे सर्व प्रमाणों में न शब्द का व्यवहार किया है। जैसे एक घमडी ने कहा कि मैंने सब परिडतों को जीत लिया। किसी ने पूछा किस तरह? घमडी ने कहा कि जहाँ परिडतों से मुकाबिला हुआ वहाँ मैंने प्रभू पूछा। उसका जवाब उन्होंने प्रमाणयुक्त कई दिये परन्तु मैंने ना के सिवाय हां कहा ही नहीं तब सब परिडत चुप होगये यह हाल आपका है।

ईस्वी सन् १२०० के करीब आवू और कायद्रा गांव के मध्य में सामन्तसिंह और गुजरात के राजा के सेनापति प्रह्लादन से लड़ाई हुई। जिन विजयजी प्राचीन लेख संग्रह में लिखते हैं पृष्ठ १०८ से १०९ तक। यह राजा कौन जाति का सामन्तसिंह था उसका निश्चय होना मुश्किल है, क्योंकि उस वखत सामन्तसिंह नाम के कई राजा विद्यमान थे ऐसा लिखा है। समझो तो विचारलो सामन्तसिंह बोधरों का चाहुमान राजा बड़ा था जो कि कर्मचन्द घच्छावत बोधरों के चरित्र में लिखा है। आपने जो फिर २ के कई बाप किये घेसा कलङ्क बांधरों के लिये भी समझा होगा। सामन्तसिंह चाहुमान राजा जालोर (जाधालीपुर) का मालिक था। (देखो जिन विजयजी का जालोर का इतिहास) पमारों से चाहुमानों ने युद्ध कर सं० ११७५ पीछे लिया था। कतिपय कालान्तर से शक्तिशाली चाहुमान नाडोल से राज्य छोड़ आलोर में रहने लगा। आवू के पमार राजा भीम की लड़कों से सामन्तसिंह ने

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतियोधित चाकी कई गोत्र अन्य खरतराचार्य प्रतियोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे है ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ है, बड़े तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। संग्रहणी प्रकरण की अन्त को गाथा देखो। "मलहार हेमसूराण, सीसलेसेण सूरिणारह्यं इत्यादि" लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुंगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तीनों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपथर साधुओं का बदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी दत्तसूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर वंदनादि सब सन्मान गुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं होता जैनवर्ग में विख्यात होने का प्रथि बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा घोर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरो तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मा को समझा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सास ने सोचा जेबाई मरा तो मेरी घेटी रांड होजायगी। तब उसने अपनी मा को तो अपने घर में लुपादी और उसकी सासू घट सब विधि बना जेबाई के घर आई। तब वह स्त्री मारे गदर के अपने पति से कहने लगी कि "देख बन्दी का चाला, सिर मूंडा मुँह काला" तब पति ने कहा "देख बन्दी की फेरी अम्मा तेरीक मेरा" आखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतियोधित वाकी कई गोत्र अन्य खरतराचायें प्रतियोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे हैं ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ है, बड़े तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। सग्रहणी प्रकरण की अन्त को गाथा देखो। “मलहार हेमसूराण, सीसलेसेण सूरिणारब्धय त्यादि” लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तीनों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपथर साधुश्री का वदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी दत्तसूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर वंदनादि सब सन्मान शुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं होता जैनवर्ग में विख्यात होने का प्रथि बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा क्रूर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरो तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मा का समझा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सासू ने सोचा जैवाई मरा तो मेरी बेटा रांड होजायगी। तब उसने अपनी मा को तो अपने घर में लुपादी और उसकी सासू घर सब विधि बना जैवाई के घर आई। तब वह स्त्री मारे गहर के अपने पति से कहने लगी कि “देख बन्दी का चाला, सिर मूंडा मुँह काला” तब पति ने कहा “देख बन्दी को फेरी अम्मा तेरो क मेरी” साखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतिबोधित थाकी कई गोत्र अन्य खरतराचार्य प्रतिबोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे हैं ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ हैं, बड़े तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। संग्रहणी प्रकरण की अन्त की गाथा देखो। "मलधार हेमसूरीण, सीसलेसेण सूरिणाऽद्वय इत्यादि" लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तीनों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपथर साधुओं का वदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी दत्तसूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर वदनादि सब सम्मान शुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं होता जैनवर्ग में विख्यात होने का प्रथि बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा क्रूर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरो तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मा का सम्झा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सासू ने सोचा जेवई मरा तो मेरी घेटी रांड होजायगी। तब उसने अपनी मा को तो अपने घर में लुपादी और उसकी सासू घट सब विधि बना जेवई के घर आई। तब वह स्त्री मारे गरूर के अपने पति से कहने लगी कि "देख बन्दी का चाला, सिर मूड़ा मुँह काला" तब पति ने कहा "देख बन्दी की फेरी, अम्मा तेरोक मेरा" आखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतियोधित बाकी कई गोत्र अन्य खरतराचार्य प्रतियोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे है ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ है, बड़े तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। सग्रहणी प्रकरण की अन्त को गाथा देखो। “मलहार हेमसूरीण, सीसलेसेण सूरिणारह्यं इत्यादि” लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुंगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तनों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपथर साधुओं का वंदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी दत्तसूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर वंदनादि सब सन्मान शुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं होता जैनवर्ग में विख्यात होने का ग्रथि बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा मर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरो तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मा को समझा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सानू ने सोचा जेवाई मरा तो मेरी बेटा रांट होजायगी। तब उसने अपनी मा को तो अपने घर में हुपादी और उसकी सानू पर सब विधि बना जेवाई के घर सार। तब वह स्त्री मारे गहर के अपने पति से कहने लगी कि “देख बन्दी का चाला, सिर मुँहा मुँहा काला” तब पति ने कहा “देख बन्दी की पेंरी जन्मा तेराक मे साखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

आपके इस लेख से आपने अपने ही गच्छ के आचार्य को तथा खरतराचार्य को मिथ्यादर्शन सम्पन्न बना दिया। जरा तो खयाल रखना था। संवत् १७०० में दानों गच्छों में शिथलाचार नहीं था। राखी कौन बांधा करते हैं? सयम चारित्रधारी साधु साध्वियों न राखी बांधने की आज्ञा देते, न राखी लेते। इसलिये राखी के निमित्त दान देने की गण्य लिख डाली।

वर्तमान के जती त्रेषधारी तक राखी अभी कोई नहीं बांधवाता, आपकी मालूम नहीं बुद्धिहीनपने का यह लेख है। अब ध्यान कर पढ़िये। संवत् १७०० के पहले का प्रमाण खरतरगच्छ में यह ४ गोत्र थे। जब धीकानेर नहीं बसा था उस समय भांडासाह ने सुमतिनाथजी का नामी मन्दिर बनवाया जिसकी प्रतिष्ठा संवत् १४३२ में हुई शिखर पर चढ़ते शिलालेख मौजूद है। यह मन्दिर खरतरगच्छ की निधा में है। यहां आपाद सुदि १४ वा पर्यपूर्ण में जब खतराचार्य या उपाध्याय संघयुक्त चैत्य वंदन करने जाते हैं तब गोलछे हाजर हो तो गायन स्तवन गाते हैं न हो तो शक्रस्तव प्रणिधान दंडक कह कर अन्य विधि संपूर्ण करते हैं। इसी तरह कूकड़, चोपडा, एकम कोठारी हाजर हो तो १३ गवाड का पञ्चायती मन्दिर धीशान्तिनाथजी में गायन स्तवन होता है। इस मन्दिर के दहिने तरफ धीशान्तिनाथजी का मन्दिर सवत् सौले में पारख ने बनवाया उसमें पारखों के हाजर रहते स्तवन गाते हैं। सवत् सौले का बना ऋषभनाथजी का मन्दिर उसमें नाहटों के हाजर रहते। माहायोर न्यामी के मन्दिर में डागों की मौजूदगी में। बाज पूज्यजी के मन्दिर में घच्छापतों की मौजूदगी में स्तवन गाया जाता है। सवत् १५०० में बना नेमनाथजी का मन्दिर दोधरों के रहते स्तवन गाया जाता है इसलिये भांडासाह गुहेदा खरतरगच्छ था। दूसरा सवत् संवत् १६२६ में धीकानेर के दंडे उपाध्याय खर पारखों के बनवाये मौजूद है। तीसरा सवत् १६२५ में

आपके इस लेख से आपने अपने ही गच्छ के आचार्य को तथा खरतराचार्य को मिथ्यादर्शन सम्पन्न बना दिया। जरा तो खयाल रखना था। संपत् १७०० में दानों गच्छों में शिथलाचार नहीं था। राखी कौन बांधा करते हैं? समय चारित्रधारी साधु साधवियों ने राखी बांधने की आशा देते, न राखी लेते। इसलिये राखी के निमित्त दान देने की गण्य लिख डाली।

वर्तमान के जती श्रेष्ठधारी तक राखी अभी कोई नहीं बंधवाता, आपकी मालूम नहीं बुद्धिहीनपने का यह लेख है। अब ध्यान कर पढ़िये। संपत् १७०० के पहले का प्रमाण खरतरगच्छ में यह ४ गोत्र थे। जब बीकानेर नहीं बसा था उस समय भांडासाह ने सुमतिनाथजी का नामी मन्दिर बनवाया जिसकी प्रतिष्ठा संपत् १४३२ में हुई शिखर पर चढ़ते शिलालेख मौजूद है। यह मन्दिर खरतरगच्छ की निधा में है। यहां आपाद सुदि १४ वा पर्ययण में जब खतराचार्य या उपाध्याय सप्रयुक्त जैन्य वंदन करने जाते हैं तब गोलछे हाजर हो तो गायन स्तवन गाते हैं न हो तो शकलाय प्रणिधान दण्डक काह कर अन्य विधि संपूर्ण करते हैं। इसी तरह फूकड़, सोपडा, हाकम कोठारी हाजर हो तो १३ गघाट वा पञ्चा यती मन्दिर धीरवितामणिजी में गायन स्तवन होता है। इस मन्दिर के दहिने तरफ धीरशान्तिनाथजी वा मन्दिर सदस्य खौल में पारख ने बनवाया उसमें पारखों के हाजर रहते स्तवन गाते हैं। सदस्य खौल वा दगा ऋषभनाथजी वा मन्दिर उसमें नाटो वे हाजर रहते। मातादीर स्वामी के मन्दिर में डायो की मौजूदगी में। राजा पूरयजी के मन्दिर में पल्लायतो की मौजूदगी में स्तवन गाया जाता है। संपत् १४०० में दगा नेमनाथजी वा मन्दिर दोहरी के रहने स्तवन गाया जाता है। इसलिये भांडासाह हां उ खरतरगच्छ का था। दूसरा सदस्य सदस्य १२५३ में धीरानेर के दगे पारख स्तवन पारखों के बनवाये मौजूद है। तीसरा सदस्य १२५३

पालते हैं। वह सब अच्छे हैं। लेकिन इस समय जैसा विरक्तभाव समयमो मोतीचन्दजी साधू हैं ऐसे कम देखने में आये हैं। जमना के तीर पर बैठे हुए बगुले को देख मछली ने कहा:—

दोहा—उज्ज्वल वर्ण गरीब गति, एक चरण बिच ध्यान।

हम जाण्यो तुम साधु हो, निपट कपट की खान ॥

तुमने श्रोसवालों के गोत्र महात्मा (मथेण) गृहस्थियों के लिखने का सबूत लिखा सच है कबूतर को तो कुआ ही दोखता है। कुँआलों को तो मथेणों से ही सब आश्रय मिला है सब मथेण हो चुके थे। जैसे “मुसिये ने पादा लोमड़ी की गवाह” “भोलणी तो गुमची को ही रत्न मानती है। लेकिन खरतराचार्यों के उन मथेणों से क्या ताल्लुक है ?

खरतराचार्यों के प्रतिबोधित धावक जहाँ २ खरतर जती साधुओं का सहवास रहा वह तो खरतरगच्छ में ही है। सबत् १७०० के पीछे जहाँ सहवास नहीं रहा वह अन्य गच्छ में घा टूँढिये तेरह पथियों को बाह क्रिया देल उनको सामाचारी करने लग गये हैं तो भी अपने धमंदाता, उपगारी, खरतरगच्छ को नहीं भूलते हैं, और २२ समुदाय हुस्मचन्दजी के टोले के पूज्य श्रीलालजीने अपने व्याख्यान में मुक्तकण्ठ से घोकानेर में कहा था कि हे भाइयो ! तुम लोग धोजिनदत्तसूरिजी के उपकार को मत भूलो। यदि वह तुम को राजपूत से धावक नहीं बनाते और जीव हिंसा, मय मांस नहीं लुटाते तो हमको उपदेश देने का अवसर कहां मिलता ? खरतर श्रोसवालों की वंशावली महात्माओं के पास थी। प्रायः वह बीका नेर रांगड़ी के पुण में कर्मचन्दजी पञ्जावन ने दगे से गिरवादी इसलिये खरतर महात्माओं के पास लिखने की वंशावली नहीं रही है। आपने लिखा सटेर गच्छ के महात्मा ने १२ गोत्र लिखने मो

पालते हैं। वह सब अच्छे हैं। लेकिन इस समय जैसा विरक्तभाव समयो मोतीचन्दजी साधू हैं ऐसे कम देखने में आये है। जमना के तीर पर बैठे हुए वगुले को देख मछली ने कहा:—

दोहा—उज्ज्वल वर्ण गरीब गति, एक चरण बिच ध्यान।

हम जाण्यो तुम साधु हो, निपट कपट की खान ॥

तुमने ओसवालों के गोत्र महात्मा (मथेण) गृहस्थियों के लिखने का सबूत लिखा सच है कबूतर को तो कुआ ही दीखता है। कुँअलों को तो मथेणों से ही सब आश्रय मिला है सब मथेण हो चुके थे। जैसे “सुसिये ने पादा लोमड़ी की गवाह” “भीलणी तो गुमची को ही रत्न मानती है। लेकिन खरतराचार्यों के उन मथेणों से क्या ताल्लुक है ?

खरतराचार्यों के प्रतियोधित श्रावक जहाँ २ खरतर जतों साधुओं का सहवास रहा वह तो खरतरगच्छ में ही है। संवत् १७०० के पीछे जहाँ सहवास नहीं रहा वह अन्य गच्छ में था दूँदिये तेरह पथियों को बाह्य किया देख उनको सामाचारी करने लग गये हैं तो भी अपने धर्मदाता, उपगारो, खरतरगच्छ को नहीं भूलते हैं, और २२ समुदाय दुस्मचन्दजी के टोले के पूज्य धीलालजी ने अपने व्याख्यान में मुक्तकण्ठ से धीकानेर में कहा था कि हे भाइयों ! तुम लोग धोजिनदत्तसूरिजी के उपकार को मत भूलो। यदि वह तुम को राजपूत से श्रावक नहीं बनाते और जीव हिंसा, मद्य मांस नहीं छुड़ाते तो हमको उपदेश देने का अवसर कहाँ मिलता ? खरतर ओसवातों की वंशावली महात्माओं के पास थी। प्रायः हर पीढ़ी के रांगडी के पुण में परमचन्दजी वज्रावत ने दंगे से गिरवादी इसलिये खरतर महात्माओं के पास लिखने को उम्मीद नहीं की है। आपने लिखा सट्टर गच्छ के महात्मा ने १२ गोत्र लि

पालते हैं। वह सब अच्छे हैं। लेकिन इस समय जैसा विष्णुमात्र
सयमो मोतीचन्दजी साधू हैं ऐसे कम देखने में आये हैं। जमना के
तीर पर बैठे हुए वगुले को देख मछली ने कहा:—

दोहा—उज्ज्वल वर्ण गरीब गति, एक चरण विच ध्यान।
हम जाण्यो तुम साधु हो, निपट रूपट की खान ॥

तुमने ओमवाताँ के गोत्र महात्मा (मय्येण गृहभियॉ व निजने
का सबूत लिखा सब है कबूतर को तो कुआँ ही दाखला है।
कुआँ को तो मरेण से हो सब आश्रय मिला है सब मय्येण है
सुके पे। जैसे सुके ने पाड़ा तोमड़ों की गवाह "मय्येण" है
गुमची को हो मय्येण है लेकिन खरनगाचायों व इन मय्येण
से क्या ताल्लु है।

अंबड धावक युग प्रधानाचार्य के दर्शनार्थ गिरनारगढ़ पर
उपवास कर एक ध्यान लगाया। तीसरे दिन अम्बिकादेवी प्रगट
हो, हाथ में स्वर्णमई देवाक्षर लिखकर कहा कि यह अक्षर जहाँ
प्रगट हों जिसका नाम और गुण सब पढ़ सके उसी को इस समय
का युग प्रधान जानना।

अंबड उस समय के आचार्यों को हाथ दिखाना फिरा। परन्तु
अक्षर प्रगट नहीं हुए। जब जिनदत्तसूरिजी के पास आया तब आप
ने वासन्तेय हाथ पर किया और अक्षर सबों के पढ़ने योग्य प्रगट
हुए। उसमें यह लिखा था:—

यत् दासानुदासाश्च सर्व देवाः,

यदी य पादाब्जतले लुठंति ।

मरुस्थली कल्पतरुः सजीयात्,

युग प्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥

अर्थ—दास के भी दास की तरह सर्व देवगण जिनके चरण
कमलों में लौटते हैं। जैसे मारवाड धली देश में कल्पवृक्ष के समान
स यह जयवन्त रहे वही युग प्रधान श्रीजिनदत्तसूरिः हैं।

ऐसे अक्षर सर्व संघ ने पढ़े। अंबड अपना जन्म सफल मानता
हुआ १२ व्रत गुरु से लिये इत्यादि।

गुरु गुण सुनकर बादशाह शकवर ने अत्यन्त प्रफुलित हो युग
प्रधानपद गुरु को दिया। तथाचार्यों के तुल्य ही खरतराचार्य जिन-
चन्द्रसूरिः जिनसिंहसूरिः का सम्पर्क तथा जहाँगीर दोनों बाद-
शाहों ने सम्मान किया। इनसे पहले कई महीनों के लिये गुजरात के
जेतवर्ग का जिजिया देरस सङ्क्षय जाने वालों को हुए मुरत तक दूर-
भाषा किया। तथा दोरविजयसूरिः को रुद्धिस्त करमान द ५

अंबड धावक युग प्रधानाचार्य के दर्शनार्थ गिरनारगढ़ पर
उपवास कर एक ध्यान लगाया। तीसरे दिन अभिकादेवी प्रगट
हो, हाथ में स्वर्णमई देवान्तर लिखकर कहा कि यह अन्तर जहाँ
गट हों जिसका नाम और गुण सब पढ़ सके उसी को इस समय
का युग प्रधान जानना।

अंबड उस समय के आचार्यों को हाथ दिखाना फिरा। परन्तु
अन्तर प्रगट नहीं हुए। जब जिनदत्तसूरिजी के पास आया तब आप
ने दासत्वेग हाथ पर किया और अन्तर सबों के पढ़ने योग्य प्रगट
हुए। उसमें यह लिखा था:—

यत् दासानुदासाश्च सर्व देवाः,
यदी य पादाब्जतले लुठन्ति ।
मरुस्थली कल्पतरुः सजीयात्,
युग प्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥

अर्थ—दास के भी दास की तरह सर्व देवगण जिनके चरण
कमलों में लौटते हैं। जैसे मारवाड़ धली देश में कल्पवृक्ष के समान
स यह जयवन्त रहे वही युग प्रधान श्रीजिनदत्तसूरिः है।

ऐसे अन्तर सर्व संघ ने पढ़े। अंबड अपना जन्म सफल मानता
हुआ १२ व्रत गुरु से लिये इत्यादि।

गुरु गुण सुनकर पादशाह सफवर ने सत्यन्त प्रफुलित हो युग
प्रधानपद गुरु को दिया। तथा आचार्यों के तुल्य ही खरतराचार्य जिन-
चन्द्रसूरिः जिनसिंहसूरिः पा सफवर तथा जहाँगीर दोनों पाद-
शाहों ने सन्मान किया। इनसे पहले कई महीनों के लिये गुजरात के
जैनधर्म का जिजिया देरस प्रमुख जाने वाली कोष्टमुद्रत तब फर-
माफ किया। तथा दोरविजरसूरिः को रुद्धिदा फरमान द ५

अंबड धावक युग प्रधानाचार्य के दर्शनार्थ गिरनारगढ़ पर
उपवास कर एक ध्यान लगाया। तीसरे दिन अम्बिकादेवी प्रगट
हो, हाथ में स्वर्णमई देवाक्षर लिखकर कहा कि यह अक्षर जहाँ
प्रगट हों जिसका नाम और गुण सब पढ़ सके उसी को इस समय
का युग प्रधान जानना।

अंबड उस समय के आचार्यों को हाथ दिखाना फिरा। परन्तु
अक्षर प्रगट नहीं हुए। जब जिनदत्तसूरिजी के पास आया तब आप
ने वासक्षेप हाथ पर किया और अक्षर सबों के पढ़ने योग्य प्रगट
हुए। उसमें यह लिखा था:—

यत दासानुदासाह्व सर्व देवाः,
यदी य पादाब्जतले लुठंति ।
मरुस्थली कल्पतरुः सजीयात्,
युग प्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥

अर्थ—दास के भी दास की तरह सर्व देवगण जिनके चरण
कमलों में लौटते हैं। जैसे मारवाड़ थली देश में कल्पवृक्ष के समान
स वह जयवन्त रहे वही युग प्रधान श्रीजिनदत्तसूरिः हैं।

ऐसे अक्षर सर्व संघ ने पढ़े। अंबड अपना जन्म सफल मानता
हुआ १२ व्रत गुरु से लिये इत्यादि।

गुरु गुण सुनकर यादशाह शकवर ने अत्यन्त प्रफुलित हो युग
प्रधानपद गुरु को दिया। तपाचार्यों के तुल्य श्री चरतराचार्य जिन-
चन्द्रसूरिः जिनसिंहसूरिः का शकवर तथा जहांगीर दोनों याद-
शाहों ने सन्मान किया। इनसे पढ़ते कई महीनों के लिये गुजरात के
जैनधर्म का जिजिया टेक्स प्रश्रय जाने वालों को कुछ मुरत तक कर
माफ किया। तथा दोरविजयसूरिः को इर्दिसा फरमान व ५

काँ फुसकाँ गन्ध दिये बिना कैसे रह सकती है। रत्नप्रभसूरि नेपाल चले जाते तो साँग काट का विष उतारते क्रोडा मनुष्य को ओस वाले अपने गच्छ के बना डालते एक का विष ओसिया में उतारने पर इतने लाखों को ओसवाल बनाना तुमने लिखा है। इसलिये पहाड़ जलता दोखा पाँव जलता नहीं दोखा। गयवरचन्दजी तो खरतर को असत्य ठहराने पोपांवाई का सा हिसाब करने लगे। "राज पोपांवाई का लेखा राई राई का"।

यत् खलसर्वपमात्राणि परछिद्रानि पश्यति ।
आत्मनो विल्वमात्रानि पश्यन्नपि न पश्यति ॥

अर्थात् दुष्ट आशय वाला मनुष्य पराये छिद्र सरसव मात्र को भी देखता है और अपना धिल जितना बड़ी गुफा को देखता हुआ भी नहीं देखता है।

जयपुर में इस वक्त भी साँग के विष उतारने वालों के घर हैं। साँग के काटे हुए मनुष्य के सामने घाजा घजा कर साँग के पवाड़े गाते हैं तब साँग काटे हुए मनुष्य के अङ्ग में साँग घूम २ कर उसी मनुष्य के मुख से अपना बैर विरोध फैलता है। किसी समय तो उस साँग को भी गुला लेते हैं और विष उतार देते हैं। गंधनकुल वाले साँग का दशवैकालिक सूत्र में लिगे मुजब अगंधनकुल वाले का विष नहीं उतरता। साँग बिच्छू के विष उतारने वाले सभी कर मौजूद हैं। हैदराबाद के बादशाह महबूबखली ने हजारों मनुष्यों का विष उतारा है। पहाँ के रहने वालों में से किसी को भी पूतुकर निक्षय करलो।

शासन देयता दत्त पातलेप से सारा के दाजे, राज स्थापन किया विजय गंग का महात्मा दियाकर भारवादि

एदि चरित्रानुवाद स्तोत्र सय के उत्थापक सम्यक्त्व रहित सिद्ध हो। "गये थे मियांजी राजा छुडाने नमाज़ की गले में आई" "दोनों काँटे जोगिया मुद्रा ओर आदेश" सम्यक्त्व जाने से चारित्र भी नहीं रहता।

जैन सूरों में २८ लब्धि का बड़ा महात्म्य कहा है सय रोगों का नाश होना। नव पद महात्म्य पर श्रीपालादि ने सात सौ कोटियों का कोढ़ मिटाया ऐसा मन कह बैठना। साधु जानते हैं लेकिन करते नहीं। मुनिचन्द्र चारित्रधारी ने सिद्ध चक्र यन्त्र का सर्व स्वरूप मयणा व श्रीपाल को सिखलाया। करना, कराना, अनुमोदना एकसा है। फिर २० स्थानक पदारावन में ८ महाप्रभाविक का पदाराधन दाता सूत्र में कहा और २० स्थानक चरित्र में लिखा है। निमित्त ८ ज्योतिष, स्वरोदय, शकुन, सामुद्रकादि जिनधर्म की प्रभावना दिखाने १४ पूर्ववर भद्रवाहु स्वामी ने वराहमिहिर ब्राह्मण को परास्त करने के निमित्त आगे होने वाली वार्ता कथन करी। वराहमिहिर मरव्यतर हो जैन सय को कष्ट देने लगा तब धर्मेन्द्र पद्मावती का आह्वान कर साँप विष दूर करने का उदसग हरस्तोत्र रच कर दिया।

तुरमणी नगरी में फालिकाचार्य ने दत्त प्रोद्धित राजा को निमित्त बतलाया, जिनधर्म का महात्म्य प्रगट किया। कवि प्रभावक सिद्धसेन दियाकर कल्याण मन्दिर स्तोत्र रच महाकाल वृत्त अयपन्ती पार्वनाथ रुद्रलिंगांतर्गत फाड़के निकाल धिक्मादित्य राजा को जिनधर्मों बनाया। स्वर्णसिद्धि दे सयत्सर चतवाया। मानतुंगाचार्य को पुद्गल भोज राजा ने जिनधर्म का चमत्कार देखने ब्राह्मणों के फटने से ४८ पन्धन बाँध ४८ ताते लगा बन्द किया। भक्तामर स्तोत्र ४८ काव्य रच पन्धन ओर ताते तोड़ सभा में द्वाये जिन धर्म की महिमा प्रगट की।

एदि चरित्रानुवाद स्तोत्र सब के उत्थापक सम्यक्त्व रहित लिख
हो। "गये थे मियांजी रोजा छुडाने नमाज़ की गले में अर्द्ध" "दोनों
काँहें जोगिया मुद्रा और आदेश" सम्यक्त्व जाने से चारित्र भो
गों रहता।

जैन सूत्रों में २८ लब्धि वा बड़ा महात्म्य कहा है सब रोगों का
नाश होना। नव पद महात्म्य पर श्रीपालादि ने सात सौ कोटियों
का कोट मिटाया ऐसा मत कह बैठना। साधु जानते हैं लेकिन करते
नहीं। मुनिचन्द्र चारित्र-धारी ने लिख चक्र यन्त्र का सब स्वरूप
नयशा व श्रीपाल को सिखलाया। करना, कराना, अनुमोदना
एकसा है। फिर २० स्थानक पदाराधन में = महाप्रभाविक का पदा-
राधन दाता सूत्र में कहा और २० स्थानक चरित्र में लिखा है।
निमित्त = ज्योतिष, स्वरोदय, शकुन, सामुद्रकादि जिनधर्म की प्रभा-
पना दिखाने १५ पूर्व वर भद्रवाहु ग्यामी ने बगहमिहर दालण को
परास्त करने के निमित्त आगे होने वाली घातार्त कथन करी। बगह
मिहर मरव्यन्तर हो जैन मन्त्र को कष्ट देने लगा तब भ्राणेद्र पपा
पत्नी का आशान कार सांप निष दूर करने का उद्वेगन दरस्तोत्र
रच कर दिया।

तुलसी नगरी में बालिवानार्थ ने दस प्रोक्त राजा को नि-
मित्त पतलाया, जिनधर्म का महात्म्य प्र ७ किया। बचि प्रभावक
मिलनेन दियादर पतलाय मान्यताय राजावत त कय
पत्नी पार्वनाथ = द्रुलिनांतर्गत पाकये निवात विमलितय राजा
को जिधर्मों पनाया। राजाविधि द समायर धातय राजा
पाकयों को दल ने राजा ने जिनधर्म का महात्म्य दल राजा
के दलन से ५५ पतल को १५ पतल राजा दल दल
तोत्र ५५ पतल राजा दल राजा दल राजा दल राजा
जिन धर्म की महिमा पतल की।

जैसे तो उस समय कृष्ण में भी गिराई हुई थी त्योंही होते तो ईश्वर विरुद्ध क्यों मिलता। पतंजलिसूरिः, जिनेश्वरसूरिः ने तो वैश्यासियों को घोरताप का मार्ग दर्शाया। राजादि सभासदों ने खरतर विगड्डिया तो भी उन्होंने इस में कुछ नरुन किया, कोय को प्राप्ति कराने में उनको हर्ष था। जिनचन्द्रसूरिः ने रवेग रगशाला ग्रन्थ उनको शिक्षा देने को रचा। अभवदेवसूरिः ने नवग्रह की टीका को और कई ग्रन्थ रचे। वल्लभसूरिः ने सध पट्टादि सौ ग्रन्थ भारत प सरसुत में रचे। जिनदत्तसूरिः ने सदेह देलावली चर्चरी आदि ग्रन्थ रचे। इन ग्रन्थों के उपदेश सुन २ जैन सध ने चैत्यवासियों से नफरत की तब चैत्यवास बहुतों ने छुड़ दिया। खरतराचार्यों का उपगार दुर्गति का कारण चैत्यवास छुड़ाने का असोम लाभ का कारण दुश्मा। उस उपगार को कृतघ्नी है। उल्ला अवर्णवाद द्वेष बुद्धि से लिखा है।

ऐ इन्साफी लोगों ' तुम कहो चैत्यवासी साधु वेधधारी अच्छा कार्य करते थे या बुरा। खरतराचार्यों ने कुछ बिगाड किया हो तो कहिये। सांप का दूध पिलाना प्रिय वृद्धि का हेतु होता है, इसमें न दूध का दोष, न पिलाने वाले का किंतु सांप का यह सभाविक गुण है। जिनेश्वरसूरिः को तथा विद्वान सभ्यपत्व सप्तति ग्रन्थ में महा प्रभाविक लिखा है ठुक देखिये।

जब जिनेश्वरसूरिः पांच सौ साधुओं के संग विचरते हुये मालवा देश की उज्जैन नगरी में पधारे तब राजा भोज के नवरत्नों में परिडत धनपाल ब्राह्मण और उसका छोटा भाई शोभन व इनका पिता वह जिनेश्वरसूरि के पिता जो काशी के राजा के पुरोहित था वह इनका सगा था, इस पूर्व परिचय से गुरु पास आने पट्टशास्त्री, अतिशयवंत समझ के अपने घडेरों का एक काव्य गुरु के सन्मुख धर कर बोला, इसका अर्थ हमारे

तो योग विद्या के साधक थे, उनमें अर्चित शक्ति का होना असम्भवित नहीं। मैस्मरिज़म वाले कहते हैं कि २० वर्ष अखण्डितपने किमी प्रकार से भी शील खण्डित नहीं करे उसके यह याग सिद्धि साधन से अद्भुत सिद्ध हो। ४० वर्ष पूरा शील पालने से पूर्ण सिद्धि हो।

दोहा-शीले सुरमानिध करे, शीलं यश सोभाग।

शीलं अरि करी केसरी, भय जावे सब भाग॥

जैन शास्त्र कहता है कि आजन्म ब्रह्मचारी जिनदत्तसूग्निः आदि खरतरादि गच्छाचार्य हुए शील पालने वाला वचन लिख होता है। लेकिन इसका पालक यथाधरने से फाड़ों मनुष्यों में भी एक हो होता है। मेरे लिखने में ध्वन किये हुए इतिहास में खाल अधत् में कहीं पृष्टि रही होगी, क्योंकि एक पिता के ४ पुत्र पिता के मुख से सुनी हुई बात को अलग २ पैठ ऊँच चारों लिखते हैं तो कुछ न कुछ पेरफार रह हो जाता है। सब असम्भ्य नहीं होता। समुद्र जैसे बुद्धिमान पूव के शान व लें ने नव सूत्र लिखा था तब हृप्रस्थता से १०३ वार्त्ता में तफावत ३२ सूत्र में ही होगया है। अतिद्वय दान पिना निश्चय एक वार्त्ता कौन कह सकता है। प्रकरणों में भी परस्पर भेद लिखा मालूम देना है। इन दोनों में कुछ न कुछ अनेका है। समन्वय कहने से मिथ्यात्व जाता है। क्याह्यद् याय जाने वह वह धुतो इनकी अपेक्षा लगा सकता है।

बालिकाचार्यजी ने शासन देवता दत्तदान चूर्ण से हटों का पताया खर्च का विद्या दसी प्रचार मलिप्ररो अोजिनचन्द्रगि ने कर दिखलाया है। लेकिन मेने इनने प्रमाण लिख दिया है। काय का समाय तो इस दत्तान मु-य है जैसे —“बुद्धे का दुम बां बाक भी भोगतो में खोशो बरने का लिखे १२ वर्ष खली निदाता का लिख देसी हो देदी पाई”। ऐसे एक निखाल ईसलमेर पाते बहने हैं।

नहीं मिटती भगवान् वीर कह गये थे । कलङ्की और उपकलङ्की पंचमारक मे धर्म विध्वंस करने वाले अनेक होंगे । मेरे सन्तानी युगप्रधानाचार्य २००४ तेवीस बेर धर्म का उदय करेंगे जो काम होना था वह खरतराचार्यों ने किया भी है । जैसे जोधपुर नरेश मानसिंहजी खरतरगच्छ के वेगड़शाखा के राज्य गुरु जिन्हों को दश हजार सालियाने की आमदनी के गांव और चवरी लारे रुपया है । उन हरचन्दजी जती पर कारणवश बहुत कुपित हुए कई मुत्सदियों को प्राण रहित किये तब बांकीदासजी कविराज चारण ने पहले कही हुई कविता नरेश को सुनाई ।

जयचन्द साथे जती हाड़ गाले हे माले ।
सेतरा मरी सरब गई धर पाछी वाले ॥
रायपाल राय ने दीनपति गहो दिखायो ।
कन ऊपर कर रुपा असंखदल अलग उडायो ॥
सूर ने त्रिया मेली सरस किया इसा वड २ कजां ।
खरतरेगच्छ हुआ इसा कदेन विरचो कमधजां ॥

यह सुन शास्त्रोक्त पढी बात को याद कर हरचन्दजी को प्राण दण्ड की सजा नहीं दी । सूरसिंहजी नरेश ने कही “ गुरां साहब अब मन्त्र शक्ति अगले जतियो मुजय आपमें नहीं होगी । ” तब जती ने कहा आप क्या देखना चाहते हो ? कहा गुरां बशीकरण । फिर जती ने काजल मन्त्र के दिया । कारणवश राजा कहीं क्रुधा देखने गये वहां अकस्मात घए काजल कुए में गिर गया । फिर रात को उस कुए में बसने वाली पोखतादेवी उस काजल के प्रभाव से राजा के पास आ पहुंची । राजा ने प्रभात समय खरतर • मन्त्रशक्ति जानकर बहुत ही स्तुति की । यह घाता पृद्धोच में है । ऐसे समस्कार खरतरगच्छ वालों का इत्य ५

नहीं मिटती भगवान् वीर कह गये थे। कलङ्की और उपकलङ्की पंचमारक में धर्म विध्वंस करने वाले अनेक होंगे। मेरे सन्तानी युगप्रधानाचार्य २००४ तैवीस बेर धर्म का उदय करेंगे जो काम होना था वह खरतराचार्यों ने किया भी है। जैसे जोधपुर नरेश मानसिंहजी खरतरगच्छ के घेगडशाखा के राज्य गुरु जिन्हों को दश हजार सालियाने की आमदनी के गांव और चवरी लारे रुपया है। उन हरचन्दजी जती पर कारणवश बहुत कुपित हुए कई मुत्सदियों को प्राण रहित किये तब बांकीदासजी कविराज चारण ने पहले कही हुई कविता नरेश को सुनाई।

जयचन्द साथे जती हाड गाले हे माले ।
सेतरा मरी सरब गई धर पाछी वाले ॥
रायपाल राय ने दीनपति गहो दिखायो ।
कन ऊपर कर रुपा असंखदल अलग उड़ायो ॥
सूर ने ब्रिया मेली सरस किया इसा वड २ कजां ।
खरतरगच्छ हुआ इसा कदेन विरचो कमधजां ॥

यह सुन शास्त्रोक्त पढ़ी बात को याद कर हरचन्दजी को प्राण दण्ड की सजा नहीं दी। सूरसिंहजी नरेश ने कही “गुरां साहब अब मन्त्र शक्ति मगले जतियों मुजब आपमें नहीं होगी।” तब जती ने कहा आप क्या देखना चाहते हो? कहा गुरां वशीकरण। फिर जती ने काजल मन्त्र के दिया। कारणवश राजा कही कूआ देखने गये वहां अकस्मात् वह काजल कुए में गिर गया। फिर रात को उस कुए में घसने वाली पोखतादेयी उस काजल के प्रभाव से राजा के पास आ पहुंची। राजा ने प्रभात समय खरतर • • • मन्त्रशक्ति जानकर बहुत ही स्तुति की। यह घातर्ता पूर्वोक्त में है। ऐसे खरतरगच्छ वालों का समय • • •

जिन्होंने संवेगपक्ष जिनधर्म का भण्डा पञ्चाय में खड़ा कर दिया
 रसमाजी दयानन्दजी के जिनधर्म पर किये हुये आक्षेपों को
 स्त करने के लिये कई ग्रन्थ रचे । जैनतत्वादर्श, अज्ञानतिमिर
 भास्कर, तत्त्वनिर्णय प्राशाद फिर अमेरिका वालों के सो प्रश्नों के
 जवाब मे चिकागो प्रश्नोत्तर इत्यादि लिख जिनधर्म की प्रभावना
 की । गच्छ कदाग्रह का राग करना और बिना है । अपनी मा को
 कोई भी डाकन नहीं कहता सर्वथा राग सराग सजमी भी नहीं
 छोड़ सकते हैं । दुपमकाल है तुम्हारी तरह निन्दक ग्रन्थ नहीं
 रचे हैं ।

दोहा-आड तिरंती देखके, तू क्यों डूबो कग्ग ।

होड़ पराई जे करे, तले सिर ऊपर पग्ग ॥

तुमने तो यह हाल किया है । गृहस्थों के घर से माल मलीदा
 लाने से आधाकर्मी आहार पानी भक्तिवन्त के घर से मिलता है,
 वह लेने से शिर के बाल उखाड़ने पैदल घूमने मात्र वारा क्रिया
 दिवाने से क्या कोई मुक्ति का साधक जिनधर्मी साधु होसकता है
 प्रवचन माता १० यतिधर्म पालने वाला ही मुक्त होता है चांदी
 चांदी का रुपया से अजाण ठगा जाता है । तुमने लिखा रोटियों के
 पे पछेवड़ी के वास्ते खरतरगच्छ में ओसवालों को लिया है ।

दादा साहय की बदौलत खरतरगच्छ वालों को रोटी की क्या
 कमी है । जभी तो आपने यह ढोंग जमाया है । जती व्याख्यानादि
 अनेक धर्म कार्य करवाते हैं तब वर्ष भर में एक या दो रुपया गृह-
 स्थ देता है । तुम तो पुस्तक लिखाने, टपवाने के बदले पटित से
 गुप्त साजा रख हजारों रुपया गृहस्थों से लूटते हो । जती उघडा
 कुआ है इसमें कोई नहीं गिरता । आप त्यागी घास से टके हुए कुए
 के जैसे हो । इसमें मनुष्य गिर जाता है, जाहिर परित्रा तो पगुनों

जिन्होंने संवेगपक्ष जिनधर्म का भण्डा पञ्चाय में खड़ा कर दिया।
 अर्यसमाजी दयानन्दजी के जिनधर्म पर किये हुये आक्षेपों को
 अस्त करने के लिये कई ग्रन्थ रचे। जैनतत्वादर्श, अज्ञानतिमिर
 नास्कर, तत्त्वनिर्णय प्राशाद फिर अमेरिका वालों के सो प्रश्नों के
 जवाब में चिकागो प्रश्नोत्तर इत्यादि लिख जिनधर्म की प्रभावना
 की। गच्छ कदाग्रह का राग करना और बिना है। अपनी मा को
 कोई भी डाकन नहीं कहता सर्वथा राग सराग सजमी भी नहीं
 गूँड सकते हैं। दुपमकाल है तुम्हारी तरह निन्दक ग्रन्थ नहीं
 ले हैं।

दोहा-आड तिरंती देखके, तू क्यों डूबो कग्ग।

होड़ पराई जे करे, तले सिर ऊपर पग्ग ॥

तुमने तो यह हाल किया है। गृहस्थों के घर से माल मलीदा
 लाने से आधाकर्म आहार पानी भक्तिवन्त के घर से मिलता है,
 वह लेने से शिर के बाल उखाड़ने पैदल घूमने मात्र वारा किया
 दिखाने से क्या कोई मुक्ति का साधक जिनधर्म साधु होसकता है
 २ प्रवचन माता १० यतिधर्म पालने वाला ही मुक्त होता है खांटी
 चांदी का रुपया से अजाण ठगा जाता है। तुमने लिखा रोटियों के
 से पछेवड़ी के वास्ते खरतरगच्छ में ओसवालों को लिया है।

दादा साहय की बदौलत खरतरगच्छ वालों को रोटी की क्या
 कमी है। जभी तो आपने यह ढोंग जमाया है। जती व्याख्यानादि
 अनेक धर्म कार्य करवाते हैं तब वर्ष भर में एक या दो रुपया गृह-
 स्थ देता है। तुम तो पुस्तक लिखाने, छपवाने के यत्न पटित से
 गुप्त साजा रख हजारों रुपया गृहस्थों से लूटते हो। जती उघड़ा
 कुआ है इसमें कोई नहीं गिरता। आप त्यागी घास से ढके हुए हुए
 के जैसे हो। इसमें मनुष्य गिर जाता है, जाहिर परित्रा तो पशुओं

जिन्होंने सवेगपक्ष जिनधर्म का भण्डा पञ्चाय में खड़ा कर दिया
 अर्यसमाजी दयानन्दजी के जिनधर्म पर किये हुये आक्षेपों को
 अस्त करने के लिये कई ग्रन्थ रचे । जैनतत्वादर्श, अज्ञानतिमिर
 गरकर, तत्त्वनिर्णय प्राशाद फिर अमेरिका वालों के सो प्रश्नों के
 जवाब में चिकागो प्रश्नोत्तर इत्यादि लिख जिनधर्म की प्रभावना
 की । गच्छ कदाग्रह का राग करना और घिना है । अपनी मा को
 कोई भी डाकन नहीं कहता सर्वथा राग सराग सजमी भी नहीं
 झूठ सकते हैं । दुपमकाल है तुम्हारी तरह निन्दक ग्रन्थ नहीं
 लिखे हैं ।

दोहा-आड तिरंती देखके, तू क्यों डूबो कग्ग ।

होड पराई जे करे, तले सिर ऊपर पग्ग ॥

तुमने तो यह हाल किया है । गृहस्थों के घर से माल मलीदा
 लाने से आधाकर्मी आहार पानी भक्तिवन्त के घर से मिलता है,
 यह लेने से शिर के बाल उखाड़ने पेदल घूमने मात्र वाता क्रिया
 दिवाने से क्या कोई मुक्ति का साधक जिनधर्मी साधु होसकता है
 प्रवचन माता १० यतिधर्म पालने वाला ही मुक्त होता है चांदी
 चांदी का रुपया से अजाण ठगा जाता है । तुमने लिया रोटियों के
 दो पट्टेवडी के चास्ते खरतरगच्छ में सोसवालों को लिया है ।

दादा साहब की बदौलत खरतरगच्छ पालो को रोटों दो क्या
 कमी है । जभी तो आपने यह ढोंग जमाया है । जती व्याख्यानादि
 अनेक धर्म कार्य करवाते हैं तब वर्ष भर में एक या दो रुपया गृह-
 स्थ नेता है । तुम तो पुस्तक लिखाने, टपवाने से पढ़ाने पढ़ित से
 गुप्त साजा रख हजारों रुपया गृहस्थों से हटते हो । जती ३
 कुशा है इसमें कोई नहीं गिरता । आप व्यापारी पास से दूने हुए
 के जैसे हो । इसमें मनुष्य गिर जाता है, जादिर परिग्रह तो .

था । तुमने भट्टीक श्रावकों को अपने मायाजाल में फँसाने को एक जोधपुर के कागज की नकल लिखी है इसकी अन्त्यता का प्रमाण लिखता हूँ । कुँअलगच्छ के धीपूज्य सिद्धसूरिजी की सम्मति से जती मुजाणमुन्दरजी ने फलोदी की अदालत में लूणावतों पर दावा किया कि तुम हमारे हो दूसरे लोगों को मत मानो । आखिर मैं कर्नल सर प्रतापसिंहजी साहब बहादुर व श्रीमान महाराजा सरदारसिंहजी साहब बहादुर ने हुक्म फरमाया कि कुँअलगच्छ का कोई हक लूणावतों पर नहीं दिला जाये जिसको माने । वह लूणावत अभी भी अन्य २ गच्छ वालों में ही है ।

कहिये आपके हाथ की लिखी हुँडी जोधपुर नरेश ने क्यों नहीं सिकारी अगर सच्ची होती तो सिकारे बुद्धिमान आपको इस नकल को सच्यों कैसे मानें ? क्यों कागज काले किये । हूयता मनुष्य जैसे फाफटे मारे वैसे क्यों भूँटे फाफटे मारते हो । एक गोत्र के कई एक घर पूर्वोक्त लिखे कारण से कुँअलों को मान रहे हैं । अजमेर, मेड़ते के वैद मुहन तप्यों में चूरु में लोगों में घोंए चर्चमान वैद फानासर गंगाशहर रत्तगढ मुशिदाबाद घगैरए के लोग खरतरगच्छ में हैं । नामदी तो खुदा ने दी है भूँटी मार २ पुकारा करो । ऐसे भूँटे लेख का जैनजाति महोदय नाम की किताब लिखोगे ।

तुमने लिखा रत्तप्रभसूरि ने दो रूप बना पर सोसियां और कोरटनगर की समकाल में प्रतिष्ठा पड़ी । जब ऐसी शक्ति वाले थे तो यदुरुपिशापन से सारे भारतभर में भूम पर कुँअलोंगच्छ के सच्यों का सोसवाल क्यों नहीं बना डाला । फिर इस समय तुमने भूँटे लोगों की किताबें नहीं लिखनी पड़ती । 'दीपक तारे सच्येय' 'सच्येय' क्या हो उस पक्ष दाप जैसे । सत्ताएगीन रत्तप्रभसूरि के पास नहीं थे नहीं तो कुछ सत्ताए ऐसी जरूर होते । पर तो रूप २

न तो रत्नप्रभसूरि ने १८ गोत्र के ओसवाल बनाये न ओसियां के मन्दिर को प्रतिष्ठा की प्रशस्ति से सिद्ध है।

प्रश्न विधवा के गर्भ रहे वह जाति व इज्जन के डर से बाल हत्या करे उस हत्या का पाप गर्भ रखने वाले पुरुष तथा स्त्री दोनों को लगे वा अकेली स्त्री को ?

प्रश्न-पञ्च महाव्रत उच्चार कर चौथा अव्रत प्रच्छन्न सेवे अपनी निश्रा में कपट से गृहस्थ पास धन रखे, नग्वाहन (डोली) पर चढ़े इनको केवल ज्ञानी साधु कहावा नहीं ?

इनका खुलासा उत्तर अपने अनुभव का पीछे शास्त्र का पाठ बताना यदि आप कहोगे सूत्र प्रकरणादि क्या तुम नहीं पढ़ते हो। खुद देखलो इस पर तो यह मिसला है किसी ने पूछा ठाकुर सा-हब परड कितने व्यंत व्यावे है ठाकुर ने जवाब दिया ओधन धाखोडा कोय नहीं।

मुझे तो आप चिकित्सक लिखा है। मुझे इन बातों की क्या खबर आप ता हरदम पोथी से ही काम रखने वाले हो। आपही उसको जानने वाले हो इसलिये पूछा है।

हे सज्जनो ! यह मेरा लिखना महाजन मुक्तावली के लेख के बराबर कर्त्ता गयवरचन्दजी कुँअलागच्छ वाले के लिये है न कि और के लिए। आपको अब मेरा लिखना है कि, यदि आपको शास्त्रार्थ करना है तो धीकानेर आजाइये। यहां ज्ञान भंडारादिका सब साधन भी है। चार विद्वानों को मध्यस्थ रख शास्त्रार्थ करले फिर खै खरतरगच्छाचार्य श्रीजिनदत्तसूरि आदि के प्रतिदोषे धावक हो वा नहीं सच झूठ का निवेडा होजायगा। घर बैठे मोतियों का शोक पूरते को कौन रोक सकता है ? आपके लिखे लेख अपने एहि

रागियों को मना दीजिये । जैसे किसी ने अपनी तावेदारनी से कहा "कह रे छोगी झांने ठाकुर", तावेदारनी ने कहा मेरे नां आप ठाकुर हो हो हजार घेर कहलालो लेकिन आम दुनियां ठाकुर कहे जब सच्चे ठाकुर हो सकोगे । मेरा न कुँअलगेच्छ से कोई द्वेष है न कोई आपसे ।

॥ दाहा ॥

जैसे को तैचा मिला, वमण को नाई ।

उन दिखाई आरसी, उन तिथि बार बताई ॥

असत्य सवाल का सत्य जवाब लिखा है, दूर बैठे मीयां मिट्ठू बने हो । ऊँचा गिरनार तो आवू को कम ऊँचा मत समझना । ऐसी लाय का है जिसको कोई दीपक लेकर देखे ।

यदि आप फिर आक्षेप करोगे तो फिर लिखने को तय्यार हूँ । जैसे भैरु ने देवी को कहा था कि मठ में पड़ी २ पादी है साहू के धके नहीं चढ़ी है । मोठ के भरोसे मिर्च मत चबा जाना । भक्तों के भरोसे मडो नहीं है अन्दर ठाकुरजी विराज रहे हैं ।

यदि आप यहाँ शास्त्रार्थ करने आजाओगे तो यह मिलला बन जायगा । "चावेजी चले छुवेजी बनने, निज के दां खोकर दुव्वेजी बन मुँह लेकर घर आना पड़ा" । यह न कर दिखावें तो खरतर मत समझना । यह वही खरतरगच्छ है जो कि आपके बड़कों में पाठशाला में बिताई थी । डाँग टूटी तो भी डोकरे जोगी तो अब भी है, हाथी गिरा हुआ भी गधे से ऊँचा ही होता है ।

यत् परस्परानि मर्माणि भाषन्ते अधमानरा ।

ते नराविलयंगान्ति बल्मीकोदर सत्पवत् ॥

अर्थात् परस्पर के मर्म अधम मनुष्य कहते हैं वह दोनों मिल्य
 होते हैं। यम्बो के रहने वाले और उदर में रहने वाले साँप की
 तरह।

हमारी तरफ से प्रथम कोई कुँअलगच्छ की वा आपकी विरु-
 द्धता का लेख नहीं निकला। आपने दादा साहब का मन माने जो
 लेख लिख कर जाहिर किया।

दोहा-आँछे नर के पेट में, खट न मोटी बात।

आधमेर के पात्र में, कैसे सेर समात ॥

भरिया वह झलक नहीं, झलकत वह आधा।

मनुष्यो की वह पारखा, चाला और लाधा ॥

गयवरचन्दजी कर मगरा, लख लिखा सब अमला।

खरतर सेना भिड़ न काइ अंत विचारा कुंभला ॥

खरतर भट्टारक पति, जिन चारित्र सुरीन्द्र।

वीरानर शुभ नगर से, गंगासिंह नगीन्द्र ॥ १ ॥

खस्तगच्छ धा सध न, सुभाक अनुमति दीन।

सौरन श्रीजी साधा, सजम में लयलान ॥ २ ॥

उगलांसय तयासिये, पाध्व ज म के दिज।

असत्य जाल क काटकर, कर दाना लज निज ॥ ३ ॥

है रुपा गुरराज की, जग में है उयदार।

मह पाठक उत्तर लिजा, र.मगणि प्रहसित ॥ ४ ॥

इति श्रीकुँअलगच्छी गयवरचन्द (रानन्दर) जी एत

असत्याक्षप निराकरण सम्पूर्णम् ॥